साहित्येतिहास लेखन परम्परामें डॉ. रामकुमार वर्मा का योगदान

डॉ. जयश्री शिंदे
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, यु.ई.एस. महिला महाविद्यालय, सोलापुर।

प्रस्तावना :

साहित्यिक रचनाएँ इतिहास से निर्मित होती हैं और इतिहास का निर्माण भी करती है। रचना का अस्तित्व इतिहास के भीतर होता है। साहित्य सामाजिक रचना है, साहित्यकार की रचनाशील चेतना उसके सामाजिक अस्तित्व से निर्मित होती है, इसलिए साहित्य का इतिहास समाज के इतिहास से अनेक रुपों में जुडी होती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हजारीप्रसाद द्विवेदी, रामविलास शर्मा, डॉ. रामकुमार वर्माने उपने इतिहास और आलोचना संबंधी लेखन में पुराणपंथियों रीतिवादियों, आधुनिकतावादियों और रुपवादियों के तरह तरह के जनविरोधी और इतिहासविरोधी दृष्टिकोणों के विरुध्द संघर्ष किया है। साहित्येतिहास लेखन एक जटिल और गम्भीर प्रत्यय है। साहित्य की निरंतरता और विकासशीलता में आस्था के बिना साहित्य का इतिहास लेखन असंभव है।

साहित्येतिहास लेखन परम्परा में क्या सही? कया गलत? यह न देखते हुए जिन साहितयकारोंने हिन्दी साहितयेतिहास लिखने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है और जिस प्रकार समुद्र की लहरें - समुद्र में भीषण उाल- पुथल मचाकर सतह से मणियों को निकालकर फेंक देती है। वही मणी अपनी आभासे समीपवर्ती प्रदेश को पूर्णत: जगमगा देती है। उसी प्रकार साहित्यरुपी समुद्र की लहरों से विचारोंकी, चिंतनकी, खोजकी भीषण उथल- पुथल मचाकर सतह से कई से कई साहित्यरुपी मणि निकले, उनमें से एक डॉ.रामकुमार वर्माका 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्क इतिहास' का निर्माण हुआ। जो साहित्येतिहास लेखन परम्परामें एक नई कडी जोडता है, और मजबूत बनाता हे, जिसका अपना अलग अस्तित्व है। हिन्दी साहित्य के इतिहास की एक सुदीर्घ परम्परा है। हिन्दी साहित्य का सर्वप्रथम इतिहास सन १८३९ में एक फ्रेंच विद्वान 'श्री गार्साद तासी' द्वारा लिखा गया। इसका नाम 'इस्त्वार द लालितेरात्यूर ऐंदुई ए हिंदुस्तानी'। यह ग्रंथ फ्रेंच भाषा में लिखित है। इसमें सत्तर कवियों का वर्णानुक्रम से परिचय दिया गया है। यह तीन खण्डों मे प्रस्तुत किया है। तासी के इतिहास का साहित्यिक और ऐतिहासिक महत्व है। तासी हिन्दी साहितेहास लेखन परम्परा में इतिहास के श्रीगणेशकर्ता एवं प्रवर्तक के गौरवपूर्ण स्थान के अधिकारी ठहरते है।

लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस से सन १८७३ में 'भाषा काव्य-संग्रह' नामक एक ग्रंथ प्रकाशित हुआ। इसके संपादक श्री. महेशदत शुक्ल थे। इसमें कतिपय प्राचीन कवियों की जीवनीसहित रचनाएँ दी गयी है। यह 'तासी' के पश्चात हिन्दी कवि- किर्तन का दूसरा प्रयास है। सन १८९३ में ठाकूर शिवसिंह सेंगर ने लगभाग एक हजार कवियों की कृतियों का परिचयात्मक संग्रह प्रस्तुत किया।

सन १८८९ में सर ग्रियर्सन 'माडर्न वर्नाक्यूलर लिट्रेचर ऑफ हिन्दुस्तान' नामक कविवृत संग्रह प्रकाशित किया। इसमें ग्रियर्सन ने अपने पूर्ववर्ती कविता- संग्राहकों के श्रमसे लाभ तो उठाया ही, साथ ही कवियोंपर थोडी बहुत आलोचना भी लिखी। यद्यपि ग्रियर्सन ने मुख्यत: सरोज को ही आधार बनाया है।

१९१३ में मिश्रबन्धुओं (गणेश बिहारी मिश्र, श्याम बिहारी मिश्र तथा शुकदेव बिहारी मिश्र) ने तीन भागो में 'मिश्रबन्धु विनोद' का प्रकाशन किया जिसमें ३७६७ कवि और लेखकों का विवरण दिया गया था। इसे हिन्दी- साहित्य का इतिहास कहें या न कहें, इस संबंध में मिश्रबन्धुओं को भी संकोच हुआ था। मिश्रबन्धुओंने अपने पूर्व कवि-किर्तनकारों तथा नागरी प्रचररिणी सभाके खोज प्रतिवेदनों का पुर्ण उपयोग किया है। सर्व प्रथम उन्होंने साहित्य- रचना का काल विभाजन किया।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने मिश्रबन्धुओंके 'कवि-कीर्तन' कास्थल स्थल पर मजाक उडाया है। उनके इतिहास को कवियों का सूचीपत्र कहा है। फिर भी यह हिन्दी कवियों का सबसे प्रथम विराट और थोडा बहुत विस्तृत इतिवृत्तात्मक ग्रंथ है। मिश्रबन्धुओं के इस इतिहास की कठोर आलोचना करने पर भी शुक्लजीने इसकी बहुत-सी सामग्री का उपयोग किया है।

सन १९१७ में पं. रामनरेश त्रिपाठी की 'कविता-कौमुदी' के दो भाग पक्राश में आये जिनमें प्राचीन-अर्वाचीन कवियों का संक्षिप्त परिचय और उनकी रचनाओं के उदाहरण दिये गये।

सन १९१८ में श्री एडविन ग्रीव्स ने अंग्रेजी में 'एन स्कैच ऑफ हिन्दी लिट्रेचर' नामक एक सौ बाहर पृष्ठ का ग्रंथ लिखा। उसके दो वर्ष बाद सन १९२० में एफ.इ.के. नामक विद्वान द्वारा लिखित एक सौ सोलह पृष्ठों की 'ए हिस्ट्री ऑफ हिन्दी लिट्रेचर' प्रकाश में आई।

सन १९२९ में आ. रामचंद्र शुक्ल का हिन्दी साहित्य का इतिहास 'हिन्दी शब्द सागर' की भूमिका के रुप में प्रकाशित हुआ। यह कई दृष्टियों से हिन्दी साहित्य के इतिहास- लेखन का व्यवस्थित प्रयत्न है, जिसमें देश की सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक परिस्थितियों की पृष्ठाभूमि पर साहित्य की गतिविधिको परखने का प्रयत्न किया गया है। लेखकने हिन्दी-साहित्य के लगभग कुछ हजार वर्षो के काल को युग- प्रवति के आधारपर विभजित किया था। शुक्लजीने विक्रम संवत् १०५० से पूर्व अपभ्रंश से जो हिन्दी की परम्परा चली आ रही थी, उस पर विशेष ध्यान नही दिया। यह कार्य राहुलजी तथा हजारीप्रसादजीने किया है। यह बातनही कि शुक्लजी का ध्यान अपभ्रंश-कालीन रचनाओं की ओर नही गया, पर उन्होंने उनमें सांप्रदायिकता देखी साहित्यिकता नाही। इसीसे उन्होंने सवंत् १०५० से पूर्व की रचनाओं को महत्व नही दिया। गुलेरीजीने अपभ्रंश-मिश्रित रचनाओं को 'पुरानी हिन्दी' ही माना है। हिन्दी साहित्येतिहास-परम्परा में शुक्लाजी का इतिहास मील के पत्थर के समान है। यह अपने विषय का सर्वप्रथम इतिहास है जिसमें अत्यंत व्यापक सुक्ष्मदृष्टि, विकासवादी दृष्टिकोण, विशद विवेचन व विश्लेषण तथा तर्कानुमत निष्कर्ष एकत्र मिलते है। उनका इतिहास हिन्दी के परवर्ती इतिहासकारों के लिए आदर्श बन गया। उसके अब तक कई संस्करण निकल चुके है।

शुक्लजी के इतिहास के बाद ही डॉ. श्यामसुन्दरदास का 'हिन्दी भाषा और साहित्य' प्रकाशित हुआ। उसमें हिन्दी भाषा के विकास के साथ साथ साहित्य की विभिन्न धाराओं को क्रमबध प्रस्तुत किया गया।

१९३० मे डॉ. सूर्यकान्तने 'हिन्दी- साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास' लिखा सिमें नूतनशोध का अंश बहुत कम है।

१९३४ में 'आधुनिक हिन्दी-साहित्य का इतिहास' पं. कृष्णशंकर शुक्त ने लिखा है। डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी की हिन्दी-साहित्य की भूमिका में हिन्दी के आदिकाल से लेकर रीतिकाल तक की राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक पृष्ठभूमि का अच्छा विवेचन मिलता है।

इस साहित्येतिहास परम्परा में आचार्य द्विवेदी के इतिहास ग्रंथो के प्राय: साथ-साथ डॉ. रामकुमार वर्मा के 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' का प्रकाशन हुआ। इसमें लेखकने ६९३ से १९९३ ई. की कालावधि को लेकर भक्तिकाल तक के इतिहास का आलोचनात्मक अध्ययन किया है। डॉ. वर्मा ने आदिकाल को दो भागों मे

विभाजित किया। सं.७५०-१००० वि. तक के अपभ्रंम साहित्य-रचनाकाल का नाकरण 'सन्धिकाल' किया। उन्होने आदिकाल में चारणों की रचनाओं को प्राधान्य देखकर असे 'चारण काल' के नामसे अभिहित किया, किन्तु यह नाम भी उपयुक्त नही ठहरता। इसमें काल- विभाजन की दृष्टि से प्रायः शुक्लजी का ही अनुसरण किया गया है। कुछ विद्वानों का कहना है कि डॉ. वर्माने ६९३ ई. से हिन्दी साहित्य का प्रारम्भ मानते हुए ९४३ ई. तक के काल को संधि-काल नाम दिया है और उसके उन्तर्गत अपभ्रंश के सिध्द, जैन तथा नाथपंथी कवियों की वाणी को प्रमुख स्थान दिया है। संपूर्ण ग्रन्थ को सात प्रकरणों में विभक्त किया। कवि होने के कारण उनकी विवेचन-शैली में लालित्य के दर्शन होते हैं। डॉ. वर्माजीने दिया हुआ प्रिाम कालखण्ड का नाम 'भाषा' की ओर संकेत करता है और द्वितीय नाम एकवर्ग का बोध कराता है। अपभ्रंश और हिन्दी का भाषा की दृष्टि से यह 'सन्धिकाल' माना भी जा सकता है, लेकिन उसके बाद के कालखण्ड को चारण काल कहना संगत नही होगा। क्योंकि चारणकाल सीमांकन उन्होनेही सं. १००० से १३७५ तक किया है और इस काल के अन्तर्गत आनेवाली अनेक रचनाओं और उनके रचियता के समय का विश्लेषण इस प्रकार किया है कि 'बीसलदेव रासो' को छोडकर कोईभी रचना चारण काल की सीमा में नही आ पाती। ऐतिहासिक व्याख्या की दृष्टि से यह इतिहास आचार्य शुक्ल के गुण- दोषों का ही विस्तार है। अनेक विकास में साहित्य ऐसे स्थल पर आता हे जहाँ भाषाओं या दो शैलियों में संधि होती है और साहित्य में इस को सन्धिकाल कहना ही अधिक उचित होता है। हिन्दी का विकास मूलतः शैरसेनी अपभ्रंश से हुआ अर्धमागधी या नागर अपभ्रंश से नहीं, किन्तु शोर सेनी का देशव्यापी महत्व इतना अधिक रहा है कि अर्धमागधी और नागर अपभ्रंश भाषाएँ उसके प्रभाव से अपने को नहीं बचा सकी। इसीलिए इसे हिन्दी साहित्य के इतिहास के अन्तर्गत स्थान मिलना चाहिए।

संधि-काल हिन्दी साहित्य के इतिहास में ऐसा पुण्य पर्व समझा जाना चाहिए जिसमें शताब्दियों की धार्मिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक परम्पराएँ हमारी भाषा में अवतरित हुई और उनेक द्वारा जनमन के विकास का पूर्व इतिहास प्राप्य है। संधि- कालीन साहित्यसे हमें अपनी भाषा की शोभाश्री की वैभवमय गाथा भलेही प्राप्त न हो, हमें भाषा विज्ञान की दृष्टिसे अपनी भाषा के इतिहास की क्रमबध्द रुप-रेखा प्राप्त होती है। इस प्रकार सन्धि- कालीन साहित्य हमारे साहित्य का प्रारंभिक इतिहास होते हुए भी सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सन्धि-काल में आध्यात्मिक और लौकिक जीवन दोनों पर ही रचनाएँ की गई और दोनों ही अपने क्षेत्रो में चरमस्र्ीिति को पहुँची हुई है।

'हिन्दी साहित्य का इतिहास' की भूमिका में डॉ. रामकुमार वर्मा ने लिखा है- हिन्दी साहित्य का इतिहास भारतीय जीवन का उन समस्त प्रवृत्तियों का प्रतिबिम्ब है जो हिन्दीभाषा के विकास के साथ ही विविध युगों में प्रतिबिंबित हुआ है। इसमें न केवल उन महान साहित्यकारों का स्थान है, जिन्होने स्थायी रचनाओं और परम्पराओं का क्रमिक विकास जो राजनीति, धर्म, दर्शन और समाज की मान्यताओं के फल स्वरुप है।

निष्कर्ष :

साहित्येतिहास लेखन में जिन इतिहास ग्रन्थों की चर्चा की उनमें हिन्दी साहित्य के इतिहासों में बहुचर्चित या मील के पत्थर के रुप में माना जाता है व है गार्सा द तासी का फ्रेंच भाषा में लिखित ग्रंथ, शिवसिंह सेंगर का 'सरोज' जार्ज ग्रियर्सन का ग्रन्थ, मिश्रबन्धुका विनोद तथा आ. रामचंन्द्र शुक्ल का इतिहास, आ. हजारीप्रसाद द्विवेदी का हिन्दी-साहित्य की भूमिका और हिन्दी साहित्य उद्‌भव और विकास तथा 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' डॉ. रामकुमार वर्मा कृत हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (१९३८ ई.) डॉ. वर्मा का इतिहास समग्रता सम्पन्न नहीं यद्यपि परिश्रम व गवेषणा है। फिर भी हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परम्परा में डॉ. वर्मा के योगदान का उपना एक अलग महत्व है। युग की माँग की पुर्ति में अहम् भूमिका अदा की है।

संदर्भ ग्रंथ :

१. कल्पना, मार्च १९५५
२. समकालीन भारतीय साहित्य - जनवरी- मार्च, १९९३

३. डॉ. जयकिशनप्रसाद — हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ ।
४. डॉ. शिवकुमार शर्मा - हिन्दी साहित्य का इतिहास।
५. मैनेजर पाण्डेय - साहित्य और इतिहास दृष्टि।
६. डॉ. माधव सोनटक्के - हिन्दी साहित्यका इतिहास।
७. डॉ. रमेश चन्द्रशर्मा - हिन्दी साहित्य का इतिहास।
८. डॉ. रामकुमार वर्मा - हिन्दी साहित्य का इतिहास।
९. डॉ. नरेंद्र - हिन्दी साहित्य का इतिहास।
१०. हिन्दी अनुशीलन — जून, २००४।